Prof. A.V.Kaur,Head ,Dept. of History,
Ch.Charan Singh University, Meerut(UP).

गुलाम वंश की स्थापनाः कुतुबुद्दीन ऐबक

इतिहास इस तथ्य को स्पष्ट उजागर करता है कि विश्व में साम्राज्य बनते और विनिष्ट होते रहे हैं और उनके निर्माण और विनाश में युद्ध निर्णायक भूमिका निभाते हैं। यही बात तराइन के दूसरे युद्ध (1192 ई०) के लिये कही जा सकती है। इस युद्ध में कुतुबुद्दीन ऐबक ने अपनी वीरता, स्वामी–भक्ति तथा कूटनीति से अपने स्वामी गौरी को आश्वस्त कर दिया था। 1192 ई० में गौरी ने ऐबक को गजनी बुलाया। ऐबक गजनी में छह महीने रुका और इस अन्तराल में ऐबक ने अपने स्वामी के साथ कन्नौज विजय की योजना बना डाली। योजना के अनुसार 1194 ई० में उन्होंने जयचन्द गहड़वाल को चन्दावर के युद्ध में परास्त कर उसे ठिकाने लगा दिया। गजनी लौटते समय मौ० गौरी ने ऐबक को भारत का प्रतिनिधित्व सौंप दिया। उसके माध्यम से ही भारत में मामलूक तुर्की की सत्ता स्थापित हुई।

इतिहासकार ए०बी०एम० हबी बुल्लाह ने भी उन्हें मामलूक तुर्क लिखा है। उन्होंने लिखा है कि भारतीय इतिहास में इस वंश को सामान्यतः गुलाम राजवंश के नाम से जाना जाता है लेकिन इस राजवंश के नौ शासकों में केवल तीन (कुतुबुद्दीन, इल्तुतमिश तथा बलवन) ने अपना राजनीतिक जीवन गुलामों की हैसियत से आरम्भ किया था, शेष छः सुल्तान स्वतन्त्र थे। तीन सुल्तानों में भी ऐबक ही ऐसा सुल्तान था जो दास मुक्ति के उपरान्त सुल्तान बना था। इल्तुतमिश व बलबन सुल्तान बनने से पूर्व ही दासता से मुक्त हो चुके थे। इन सुल्तानों में से किसी से भी दासता की अवस्था में राजसी पदक प्राप्त नहीं किया गया था। इसलिये इन तमाम

सुल्तानों की श्रेणी को गुलाम शासकों की श्रेणी में गिनना उपयुक्त नहीं है।

गुलाम शब्द स्लेव का रूपान्तर है जिसका अर्थ है लम्बी गुलामी यानी लम्बे समय तक जो व्यक्ति अपने स्वामी के कठोर नियंत्रण में रखते हुए दयनीय जीवन व्यतीत करे। यह बात हम कुतुबुद्दीन ऐबक के साथ नहीं पाते। कुतुबुद्दीन तुर्की का निवासी था। उसके पिता की आर्थिक अवस्था दयनीय थी अतः उसने अपने पुत्र को निशापुर के काजी फखरूद्दीन अब्दुल अजीज कूफी को बेच दिया। इस प्रकार ऐबक दासता का जीवन व्यतीत करने लगा। ऐबक ने अपनी प्रतिभा व कुशाग्रबुद्धि से काजी का दिल जीत लिया। काजी ने उसकी शिक्षा की उचित व्यवस्था की। काजी की अनुकम्पा से उसने घुड़सवारी, रण–विद्या तथा तीरंदाजी में अच्छी दक्षता पा ली थी। काजी की मृत्यु के उपरान्त उसके पुत्रों ने ऐबक को एक व्यापारी को बेच दिया। व्यापारी उसे गजनी ले आया और गजनी के बाजार में मानवपारखी मुहम्मद गौरी ने उसे खरीद लिया। सुल्तान की दासता में आते ही गुलाम ऐबक का भाग्य चमक उठा। उसकी स्वामी भक्ति से रीझकर गौरी ने प्रथम उसे आखूर (घुडसवारों का अध्यक्ष) के पद पर नियुक्त किया। तराईन के युद्धों में वह अपने स्वामी के साथ था। उसकी वीरता से प्रसन्न होकर गौरी ने उसे भारत से गजनी लौटते समय पंजाब और अंतर्वेद का हाकिम नियुक्त किया था। स्वामी की अनुपस्थिति में उसने अजमेर पर गौरी का प्रभुत्व बनाये रखा। सैनिक अभियानों में उसकी रणकुशलता को देखकर गौरी ने उसे अपना सेनापति नियुक्त कर दिया। खोखरों को परास्त कर 1205 ई० में जब गौरी गजनी लौट रहा था तब उसे ''मलिक'' व ''वली–अहद'' (उत्तराधिकारी) की पदवियों से अलंकृत किया था। गौरी की सेना में सेनापति तथा भारत में गौरी के साम्राज्य में वह वायसराय बन कर रहा और 1206

ई० में गौरी के मरने पर ऐबक भारत का सुल्तान बना। अतः देखा जाये तो ऐबक को गुलाम वंश का संस्थापक मानने से अधिक दिल्ली सल्तनत का संस्थापक माना जाना चाहिये। मौहम्मद गौरी के भतीजे गयासुद्दीन महमूद ने उसे सुल्तान स्वीकार कर सुल्तान के सारे प्रतीक भेज दिये। 1208 ई० में खलीफा ने भी ऐबक को सुल्तान स्वीकार कर लिया।

कुतुबुद्दीन ऐबक (1206–1210 ई०):

मोहम्मद गौरी अपनी आकस्मिक मृत्यु (15 मार्च 1206 ई०) के कारण अपना उत्तराधिकारी नियुक्त नहीं कर सका था। उसके कोई पुत्र भी नहीं था। ऐसी अवस्था में वह अपने गुलामों पर ही विश्वास करता था। **मिनहाज–सिराज** के अनुसार उसने एक बार स्पष्ट भी कर दिया था कि मेरे उपरान्त मेरे दास ही उत्तराधिकरी होंगे और वे अपने राज्यों के खुतबों में मेरा नाम सुरक्षित रखेंगे।

डॉ० ए० एल० श्रीवास्तव के अनुसार मुहम्मद गौरी की यह इच्छा थी कि भारत में उसका उत्तराधिकारी कुतुबुद्दीन ऐबक ही बने क्योंकि 1206 ई० में उसने उसे नियमित रूप से अपना प्रतिनिधि नियुक्त कर ''मलिक'' की उपाधि से विभूषित कर दिया था। जब मुहम्मद गौरी की मृत्यु का समाचार ज्ञात हुआ तो लाहौर के नागरिकों ने कुतुबुद्दीन को राजशक्ति धारण करने के लिये आमन्त्रित किया क्योंकि उन्हें विश्वास था कि ऐबक एक शक्तिशाली व योग्य व्यक्ति है।

शासक के रूप में ऐबक:

कुतुबुद्दीन ऐबक एक वीर, कर्मठ एवं योग्य सेनानायक था। उसने उत्तरी भारत की विजय में मुहम्मद गौरी की अपूर्व सहायता की और पहले स्वतन्त्र तुर्की

वंश की स्थापना की। उसने केवल 4 वर्षों तक शासन किया। इस अवधि में उसने किसी नये क्षेत्र पर विजय प्राप्त नहीं की क्योंकि उसने अपना पूरा ध्यान कानून और व्यवस्था स्थापित करने में लगाया और अपने अधिकृत क्षेत्र की सेना को सुदृढ़ किया। उसका मुख्य उद्देश्य भारत में अव्यस्क तुर्की राज्य की पृथक पहचान स्थापित करना था जिसका अस्तित्व इसकी सैन्य शक्ति और इसकी निश्चित सीमाओं के निर्धारण पर निर्भर था। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये उसने स्वयं को मध्य एशियाई राजनीति से अलग रखा।

इतिहासकार **ताजुलमासिर** ने उसके शासन के विषय में लिखा है कि– **''देश का राज्य–प्रबन्ध अच्छा था। देश में शान्ति थी और सब लोग बडे सुखी थे। सब के साथ न्याय का व्यवहार किया जाता था।''** ताजुलमासिर ऐबक से इतना प्रसन्न था कि उसने उसके शासन की प्रशंसा में यहाँ तक लिखा है कि उसके शासन में– **''शेर व बकरी एक घाट पर ही पानी पीते थे।''**

कुतुबुद्दीन को सबसे अधिक संकट मध्य–एशिया की ओर से था। ख्वारिज्म के शाह की दृष्टि गजनी व दिल्ली दोनों पर थी। अतः कुतुबुद्दीन ऐबक ने सर्वप्रथम ख्वारिज्म के शाह को ऐसी स्थिति में ला दिया था कि वह गजनी और दिल्ली पर आक्रमण नहीं कर सके। कुबाचा तथा यल्दौज ये दोनों इसके प्रतिद्वन्द्वी थे। कुबाचा तो वैवाहिक सम्बन्धों के उपरान्त शान्त हो गया था। गजनी की खाली गद्दी भी कुतुबुद्दीन के लिये समस्या मूलक बन गयी। अपने प्रतिद्वन्द्वियों को समाप्त करके उसने अपनी आन्तरिक स्थिति को सुदृढ़ किया। अतः अब उसने उन विद्रोही राजपूत नरेशों के विरुद्ध अभियान किये जिन्होंने गौरी मृत्यु से उत्पन्न स्थिति का

लाभ उठाकर अपनी स्वतन्त्र सत्ता स्थापित कर ली थी। ग्वालियर और कालिंजर हाथ से निकल गये थे। बदायूँ और फरूखाबाद से भी तुर्को को निकाल दिया गया था। इन राज्यों ने अब कर देना भी बन्द कर दिया था। ऐबक ने बदायूँ के विरुद्ध सैनिक कार्यवाही करके उसे कर देने के लिये बाध्य किया और इल्तुतमिश को वहाँ नियुक्त किया। अपने अल्पकाल में भी उसका जीवन संघर्षमय ही रहा। परन्तु संघर्ष की घड़ियों में भी वह अपने दैनिक जीवन में किसी प्रकार का व्यवधान नहीं आने देता था। नवम्बर 1210 में वह एक दिन लाहौर में चोगान (पोलो) खेलते समय घोडे से गिरकर मृत्यु को प्राप्त हुआ। इसकी मृत्यु के सन्दर्भ में **मिनहाज–उस–सिराज** ने अपनी पुस्तक ''**तबकाते नासिरी**'' में लिखा है– कुतुबुद्दीन के युद्ध–कौशल व विजेता होने में तो किसी को किसी प्रकार का सन्देह नहीं होना चाहिये। वास्तव में भारत में उसने अपने स्वामी गौरी से भी अधिक सैनिक अभियानों में भाग लिया और लगभग सभी में सफलता प्राप्त की परन्तु वह एक विजेता होने के साथ–साथ कुशल प्रशासक भी था। अपनी कूटनीति व निपुणता के कारण ही ऐबक भारत में तुर्की राज्य की रक्षा कर सका और स्वयं को एक स्वतन्त्र शासक के रूप में स्थापित करने में सफल हुआ। उसने शासन योग्यता व न्याय निष्पक्षता से किया। वह प्रजा की भलाई के लिये सदैव प्रयत्नशील रहता था परन्तु ऐबक ने न तो प्रशासन में कोई नवीन नीति का निर्माण किया और न ही कोई नवीन सुधार ही किये।

कुतुबुद्दीन ऐबक को गुलाम वंश का संस्थापक माना जाता है। कुतुबुद्दीन ऐबक ने भले ही अपने शासन काल की शुरूआत एक गुलाम के रूप में की परन्तु 1208 ई० में उसे दासता से मुक्ति मिल गई थी। अतः उसे पूर्णतः गुलाम शासक कहना उचित नहीं होगा अपितु इसे मामलूक शासक कहना अधिक उचित प्रतीत

होता है। उसका दुर्भाग्य ही था कि वह शासक बनने के पश्चात अधिक दिनों तक जीवित नहीं रह सका। सम्भवतः यही कारण है कि वह अपने साम्राज्य न तो अधिक विस्तार ही कर पाया और न ही वह अपने साम्राज्य के वास्तु–स्थापत्य की तरफ अधिक ध्यान दे पाया। यही कारण रहा होगा कि कुतुबुद्दीन ऐबक को एक कुशल योद्धा व गुलाम वंश (मामलूक वंश) के संस्थापक के रूप में अधिक पढ़ा जाता है न कि एक कुशल व साम्राज्यवादी शासक के रूप में। ऐबक की दानशीलता के कारण इतिहासकार ''मिनहाज'' ने ऐबक को ''हातिम द्वितीय'' की संज्ञा प्रदान की है।

शम्सुदद्दीन इल्तुतमिश

शम्सुदद्दीन इल्तुतमिश मध्य एशिया इल्बरी कबीले का तुर्क था, बचपन में उसके विरोधी भाइयों ने उसे बसरा के व्यापारी जमालुदीन के हाथों बेच दिया था। जमालुद्दीन ने उसे कुतुबउद्दीन ऐबक के हाथों बेच दिया, इस प्रकार वह ऐबक के साथ दिल्ली आया। वह बहुत सुन्दर व बड़ा ही प्रतिभाशाली था। ऐबक के संरक्षण में उसने पढ़ना–लिखना सीखा और सैनिक शिक्षा प्राप्त की। उसकी योग्यता से प्रभावित होकर मुहम्मद गोरी ने ऐबक से कहा था कि – ''इल्तुतमिश के साथ अच्छा बर्ताव करना किसी दिन यह ख्याति अवश्य प्राप्त करेगा।'' इल्तुतमिश अपनी योग्यता के बल पर उन्नति करते हुऐ अमीर–ए–शिकार के पद पर पहुंच गया, और जब ऐबक ने ग्वालियर जीता तो उसे वहां का सूबेदार बना दिया, फिर ऐबक ने उसके साथ अपनी एक पुत्री का विवाह कर उसे बरन का सूबेदार बना दिया। ऐबक की मृत्यु के बाद आरामशाह को जूद के मैदान में परास्त कर इल्तुतमिश ने दिल्ली सल्तनत पर अपना अधिकार कर लिया।

ऐबक की मृत्यु के बाद तुर्क अमीरों ने आरामशाह नामक अयोग्य व्यक्ति को दिल्ली का शासक बना दिया, उसके समय में दिल्ली में अराजकता व अव्यवस्था फैल गई, अपनी अयोग्यता के कारण वह स्थिति पर नियन्त्रण पाने में असफल रहा। अतः अब इल्तुतमिश ने उसे 1211 में जूद के मैदान में परास्त कर दिल्ली पर कब्जा कर लिया। इल्तुतमिश के विषय में डॉ0 ईश्वरीप्रसाद ने कहा कि–''वह दास का दास था, परन्तु अपनी योग्यता और सदगुणों के कारण उसने स्वयं को सल्तनत का जन्मजात अधिकारी सिद्ध कर दिया।''

इल्तुतमिश के सम्बन्ध में लेनपूल ने भी कहा कि– ''गोरी के लिये जैसा ऐबक था, वैसे ही ऐबक के लिये इल्तुतमिश था, ऐबक उसके साथ पुत्रवत व्यवहार करता था।''

इल्तुतमिश की कठिनाईयाँ

(1) असंगठित मुस्लिम राज्य :

ऐबक ने मात्र चार वर्षों तक ही शासन किया था और इस वजह से वह शासन–व्यवस्था की तरफ कोई ध्यान नहीं दे पाया था, अतः ऐसे असंगठित मुस्लिम राज्य का अधिक दिनों तक स्थाई रहना असम्भव था।

(2) कुतुबी व मुइज्जी अमीरों का विरोध :

ऐबक के और मौहम्मद गोरी के अनेक ऐसे अमीर थे, जो स्वयं को इल्तुतमिश से अधिक योग्य मानते थे, और एक दास का आधिपत्य मानने को तैयार न थे।

(3) नासिरूद्दीन कुबाचा की समस्या :

नासिरूद्दीन कुबाचा मुल्तान व इच्छा का सूबेदार था, ऐबक की मृत्यु के बाद उसने भटिण्डा, कोहराम सुरसुती व लाहौर पर अधिकार कर लिया था वह ऐबक का बहनोई होने के नाते दिल्ली पर अपने अधिकार का दावा भी कर सकता था, अतः उसकी समस्या भी इल्तुतमिश के लिये जटिल समस्या थी।

(4) ताजुद्दीन एल्दौज की समस्या :

ताजुद्दीन एल्दौज ने गजनी में अपनी स्वतन्त्र सत्ता स्थापित कर ली थी, और वह दिल्ली सुल्तान को अपने अधीन मानता था, अतः एल्हौज की महत्वकांक्षा भी इल्तुतमिश के लिये भावी खतरे की घण्टी थी।

(5) बंगाल की समस्या :

बंगाल में अलीमदन खिलजी का आधिपत्य था, लेकिन उसके अत्याचारों से क्षुब्ध होकर अमीरों ने उसकी हत्या कर दी व हिसामुद्दीन एवाज को बंगाल का सूबेदार बनाया, उसने ग्यासुद्दीन की उपाधि धारण कर अपनी स्वतन्त्र सत्ता घोषित कर दी, व जाजनगर व तिरहुत पर अधिकार कर लिया। अतः वह भी इल्तुतमिश के लिये खतरा था।

(6) उत्तर–पश्चिमी सीमा की सुरक्षा की समस्या :

उत्तर–पश्चिमी सीमा में मंगोलों की आतंकवादी गतिविधियाँ बढ़ती जा रही थी, अतः इल्तुतमिश को मंगोलों के आक्रमण से दिल्ली सल्तनत की रक्षा भी करनी थी।

(7) राजपूतों की समस्या :

ऐबक की मृत्यु के बाद रणथंभौर व जालौर पर चौहानों ने कालिंजर व आजमगढ़ पर चन्देलो ने व ग्वालियर पर प्रतिहारों ने अपना अधिकार कर स्वतन्त्र सत्ता घोषित कर दी, अतः उनका दमन भी इल्तुतमिश की समस्या थी।

(8) खोखर जाति की समस्या :

सिन्ध व झेलम के मध्य युद्धप्रिय व अभिमानी खोखर जाति रहती थी, जो तुर्कों से संघर्ष करती रहती थी, उनका दमन भी इल्तुतमिश के लिये अनिवार्य था।

(9) दुर्बल राजत्व :

मुस्लिम कटटर वर्ग इल्तुतमिश को अपना स्वामी मानने को तैयार न था क्योंकि वह एक दास था व इस्लामी कानून के अनुसार दास शासक नहीं बन सकता, अतः उसे अपने राज्यभिषेक का औचित्य सिद्ध करना था।

इल्तुतमिश की सफलतायें :—

(1) सर्वप्रथम इल्तुतमिश ने अमीरों के विरोध के दमन का निश्चय किया, जिन्होंने जहाँदारशाह के नेतृत्व में विद्रोह किया था, इल्तुतमिश ने उन्हें परास्त कर अधिकांश अमीरों का वध कर दिया व अन्य को उच्च पर प्रदान कर सुदूर प्रान्तों में भेज दिया।

(2) इल्तुतमिश ने पहले ताजुद्दीन एल्दौज की आधीनता तो स्वीकार कर लिया, परन्तु अपनी स्थिति का सुदृढ़ बनाने के बाद उसने ताजुद्दीन पर आक्रमण कर बन्दी बना लिया और 1215 में उसकी हत्या करवा दी।

(3) इल्तुतमिश ने नासिरूद्दीन कुबाचा पर आक्रमण किया, कुबाचा ने संधि के लिये प्रार्थना की परन्तु इल्तुतमिश ने यह मांग स्वीकार नहीं की, कुबाचा प्राणों की रक्षा के लिये नदी मार्ग से भागा, परन्तु उसकी वह पर मृत्यु हो गई।

(4) इल्तुतमिश ने मंगोल आक्रमण से दिल्ली की रक्षा की। मंगोल नेता चंगेज खाँ के भय से ख्वारिज्म का शाह जलाउद्दीन मागबर्नी भारत आ गया, उसने इल्तुतमिश की मद्द मांगी परन्तु इल्तुतमिश ने कोई मद्द नहीं की, इधर चंगेज भारत की गर्मी को देखते हुये सिन्धु नदी के तट से वापस चला गया।

(5) इल्तुतमिश ने बंगाल पर आक्रमण कर हिसामुद्दीन एवाज को परास्त कर उसे दिल्ली सल्तनत का आधिपत्य स्वीकार करने के बाध्य किया, हिसामुद्दीन ने स्वतन्त्र होने की चेष्टा की, अतः उसका वध कर मलिक अलाद्दीन जानी को बंगाल का सूबेदार बना दिया गया।

इल्तुतमिश ने राजपूतों के विद्रोहों का दमन कर उनसे रणथंभौर, जालौर, कालिंजर, ग्वालियर, नरवर आदि को पुनः प्राप्त किया।

इल्तुतमिश ने मेवात, कटेहर आदि के विद्रोहों का दमन किया व उसने कन्नौज, बनारस, अवध पर पुनः अपना नियन्त्रण स्थापित किया।

इल्तुतमिश : गुलाम वंश का वास्तविक संस्थापक

डॉ0 आर्शीवादीलाल श्रीवास्तव ने इल्तुतमिश को गुलाम वंश का वास्तविक संस्थापक स्वीकार किया। उसने दिल्ली सल्तनत की जड़ें सुदृढ करने हेतु निम्न कार्य किये—

(1) चालीस गुलामों के दल का गठन :

उसने अपने राज्य को सुदृढ़ : करने के उद्देश्य से अपने समर्थक चालीस तुर्की गुलामों का गठन किया और उसे तुकनि—ए—चहलगानी का नाम दिया, उन्होंने इल्तुतमिश को शासन—कार्यों में बड़ी सहायता पहुँचाई और इल्तुतमिश के उत्तराधिकारियों के समय ने राज्य में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

(2) खलीफा से प्रमाण–पत्र :

अपने राज्याभिषेक का औचित्य सिद्ध करने के लिये उसने बगदाद के खलीफा अल मुन्तसिर बिल्लाह से प्रमाण पत्र 18 फरवरी, 1229 में प्राप्त कर अपने पद को वहा बनाया, सुल्तान बनने से पूर्व उसे ऐबक ने दासता से स्वतन्त्र कर दिया था। इल्तुतमिश ने अमीर–उल मोमीन की उपाधि धारण की।

इल्तुतमिश के समय न्याय व्यवस्था में विशेष सुधार किये गये। उसके महल के सामने दो संगमरमर के शेरो की मूर्तियाँ थी, जिनके गले में सोने की जंजीर बंधी थी, अन्याय से पीड़ित व्यक्ति किसी भी समय आकर बादशाह से न्याय की मांग कर सकता था। उसके समय में न्याय–व्यवस्था इतनी सुदृढ़ थी कि भेड़िया और बकरी एक ही घाट पर पानी पीते थे।

इल्तुतमिश ने मुद्रा–प्रणाली में भी सुधार किये। इल्तुतमिश ही पहला शासक था, जिसने सिक्कों पर टकसाल का नाम अंकित कराया, इल्तुतमिश ने चांदी का टंका और ताँबे के जीतल नामक सिक्कों को प्रचलित करवाया।

इल्तुतमिश एक कट्टर मुस्लिम शासक था और उसने मुस्लिम धर्मगुरू खलीफा का नाम अपने सिक्कों पर अंकित करवाकर उसके प्रति अपनी आस्था प्रकट की थी, साथ ही उसने अमीर–उल–मोमीन जैसी सम्माजनक उपाधि भी धारण की थी।

इल्तुतमिश साहित्य व कला का उदार संरक्षक था। उसके दरबार में हसन निजामी, मिनहाज–उस–सिराज जैसे विद्वान भी रहते थे, साथ ही इल्तुतमिश ने कुतुबमीनार का निर्माण पूरा करवाया, और नागौर में अतारकिन के दरवाजे का निर्माण कराया।

इस प्रकार इल्तुतमिश गुलाम वंश का वास्तविक संस्थापक था, जिसने दिल्ली सल्तान को स्थायित्व प्रदान किया, उसने दिल्ली में एक केन्द्रीकृत शासन की स्थापना की। दिल्ली की बाह्य आक्रमणों से रक्षा की। निःसन्देह वह एक योग्य व कुशल शासक था।

रजिया सुल्तान

इल्तुतमिश की मृत्यु के बाद एक दशक एक दिल्ली में राजनीतिक अस्थिरता की स्थिति बनी रही। इस काल के दौरान इल्तुमिश के चार वंशजों को राजगद्दी पर बैठाया गया और उन की हत्या कर दी गई। इसका मुख्य कारण तुर्क अमीरों के बीच तीक्षण गुटबंदी थी। जैसा कि तुर्क लोग कई जनजातियों में विभाजित थे। जिनमें से कुछ ने इस्लाम कबूल कर लिया था और कुछ ने इस्लाम को कबूल नहीं किया था। उनके बीच घोर संघर्ष की स्थिति रहती थी। मसलन मुईज्जुद्दीन और मावरा–उन–नहर की गैर–मुस्लिम गुज्ज तुर्क जनजाति के बीच बराबर संघर्ष चलता रहता था। इसके अलावा वे तुर्क जनजातीय समूह भी हमेशा एक–दूसरे के विरुद्ध लड़ते रहते थे जिन्होंने इस्लाम धर्म स्वीकार कर लिया था।

इल्तुतमिश के शासन काल में तुर्कों के अतिरिक्त अगला महत्त्वपूर्ण जातीय समूह ताजिकों का था। ताजिक लोग मावरा उन–नहर और खुरासान क्षेत्रों के ईरानी थे। इस क्षेत्र में तुर्कों के प्रवेश करने के पूर्व ईरानियों का प्रधान्य था जिन्हें वहाँ से निकाल दिया गया था।

तुर्क लोग योद्धा थे वे प्रशासन कला के बारे में कुछ भी नहीं जानते थे। अतः ताजिक लोगो ने जिनमें से बहुत से लोग पहले जमींदार हुआ करते थे।

प्रशासन का अधिकांश भार संभाला। इस प्रक्रिया में उनमें से कई लोगों ने उच्च पद प्राप्त किए। इस प्रकार इल्तुतमिश का वजीर निजामुल–मुल्क जुनैदी एक ताजिक था। मुक्त एवं दास दोनो ही प्रकार के तुर्क अमीर ताजिकों को प्रधानता देने का विरोध करते थे। उन्हें योद्धा के बजाय कलम का धनी हो जाने के बाद तुर्कों की जनजातीय संरचना काफी हद तक खंडित हो गई थी।

जनजातीय संघ एवं व्यक्तिगत बंधन दासता का था। कई सुल्तानों ने तुर्क दासों को पाल–पोस कर योद्धा एवं प्रशासक बनाने के विशेष प्रयोजन से खरीदा था। ऐसे दासों के साथ अच्छा बर्ताव किया जाता था और अक्सर उन्हें शासकों के अपने पुत्रों के साथ–2 प्रशिक्षण दिया जाता था।

इल्तुतमिश

रजिया के पिता इल्तुतमिश के पास अधिकारियों का अपना एक अभिजात् समूह था जिसे अपने आप पर बहुत गर्व था। यह समूह मुक्त अमीरों को भी अपने बराबर नहीं समझता था। बाद में इतिहासकार जियाद्दीन बरनी इन दास अधिकारियों को विलशानी की संज्ञा देता है। चालीस की संख्या कोई विशेष महत्त्व नहीं रखती है क्योंकि इल्तुतमिश के अमीरों की सूची मेंऐसे 25 से भी अधिक दास अधिकारों का उल्लेख मिलता है।

यदि इस चालीस के समूह ने भी एक संगठित निकाय के तौर पर व्यवहार किया होता तो सम्भवतः स्थिति संभल जाती लेकिन जैसा कि बरनी का कथन है ''उनमें से कोई भी किसी अन्य के समक्ष झुकने को तैयार नहीं होता था और क्षेत्रों शक्तियों, पदों एवं सम्मानों के वितरण में वे एक–दूसरे के साथ समानता की मांग

करते थे।'' मध्यकालीन इतिहास के एक रोमांचकारी व अनूठे व्यक्तित्व रजिया (1236–1240) के उत्थान और पतन को इसी पृष्ठभूमि में देखा जाना चाहिए।